Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852; Impact Factor: RJIF 5.44
Received: 03-04-2020; Accepted: 15-04-2020; Published: 04-05-2020
Volume 1; Issue 1; 2020; Page No. 32-37

स्त्री विमर्श और हिंदी उपन्यास

प्रीति अग्रवाल
रिसर्च एसोसिएट, P.G.D.A.V कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

प्रस्तावना

विश्व भर की आबादी में आधी से अधिक स्त्री ही है पर सबसे अधिक उपेक्षित है। हिंदी साहित्य में अपने नारी मुक्ति आंदोलन एक संगठित रूप में सत्तर के बाद ही रूप लेता है। इसका मूल कारण नारी के स्वत्व की पहचान ही है। स्वत्व बोध नारी शिक्षा का ही परिणाम है। वैदिक काल में स्त्री पुरुष में समानता की स्थिति कायम थी। पर समाज में पितृसत्तात्मक नीतियों एवं नियमों का ही पालन होता रहा, वैदिक काल की स्त्री को वेदाध्ययन और शास्त्रार्थ करने का अधिकार था। वह अपनी इच्छा से पुरुष चयन कर सकती थी। मध्यकाल में स्त्री की स्थिति बिगड़ गयी। सती प्रथा,शैशव विवाह, विधवा विवाह निषेध, पर्दा प्रथा, देवदासी प्रथा आदि के तहत एक प्रकार से स्त्री को बंदी बनाकर रखने की प्रवृत्ति इस युग में दिखती है। नारी आंदोलन की शुरुआत पाश्चात्य देशों में हुई है। इंग्लैंड और अमेरिका में स्त्रियों के मताधिकार को लेकर आंदोलन शुरू हुआ, स्त्री मुक्ती का दूसरा चरण साठ के दशक में पश्चिम में दूसरे विश्वयुद्ध से प्रभावित होकर शुरू हुआ है। स्त्रियों ने महसूस किया कि कानून के पारित होने पर भी समाज में व्यवहारिक स्तर पर अब भी भेदभाव बरकरार है। भारत में नारी जागरण का उद्‌भव एवं विकास आधुनिक काल में होता है। राजाराम मोहन राय, ईश्वर चंद्र विद्यासागर, गांधीजी जैसे समाज सुधारकों ने पर्दा प्रथा, बाल विवाह जैसी कुरीतियों के विरुद्ध आवाज उठाई। पर्दा प्रथा के खिलाफ आवाज उठाई। सरोजिनी नायडू ने स्त्रियों को वोट देने के अधिकार के लिए प्रस्ताव पारित करवाया। आदि काल, मध्यकाल और रीति काल में स्त्री का भोग्या रूप ही अधिक चित्रित हुआ है। आधुनिक काल में ही स्त्री को लेकर एक बदली हुई मानसिकता का विकास दिखाई देता है। अब स्त्री सहानुभूति नहीं चाहती। स्त्री अपनी हैसियत पहचान कर अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाने लगी है। स्त्री विमर्श का अर्थ पुरुषों का विरोध नहीं अपितु उसकी मांग है कि स्त्री–पुरुष संबंधों में एक दूसरे के प्रति सम्मान और आत्मीयता का भाव आवश्यक है। स्त्री देह का सवाल आज भी समाज के समक्ष जटिल प्रश्न है। स्त्री के सम्मान को उसके शरीर के साथ इस तरह से जोड़ दिया जाता है कि उसके साथ बलात्कार जैसी घिनौनी घटना के घटने पर भी उसके नैतिक पतन का जिम्मेदार ठहराया जाता है। स्त्रियाँ तो अपनी बेडियों को तोड़कर बनी–बनाई छवियों और शास्त्रीय बंधनों से बाहर निकल चुकी है, लेकिन समाज की दृष्टि में भी बदलाव आना आवश्यक है। पितृसत्ता के दोहरे मानदंडों को बदलना आवश्यक है। स्त्री विमर्श स्त्री आंदोलन केवल स्त्री अस्मिता की पहचान ही नहीं बल्कि स्त्री संवेदना का विस्तार है। स्त्री मुक्ति की परिभाषा पुरुष और स्त्री की दृष्टि से से अलग–अलग हो सकती है। पुरुष समय के दबाव और परंपरा की अनुपालना के चलते स्त्री को उतनी स्वतंत्रता देता चलता है जितनी से उसका अपना महत्व बना रहे। स्त्री मुक्ति की अवधारणा में यही कहा गया है कि स्त्री को स्वनिर्णय और स्वायत्तता का अधिकार मिले। स्त्री विमर्श स्त्री को वस्तु से न केवल व्यक्ति बल्कि एक स्वायत्त व्यक्ति बनाना चाहता है। स्त्री को पुरुष के समान बनने की प्रक्रिया में सबसे बड़ी बाधा धर्म और जाति ने खड़ी की है। हम देखते हैं कि दुनिया के लगभग सभी धर्म स्त्री को दोयम दर्जे का जीव मानते हैं। स्त्रियां अपने अस्तित्व और अस्मिता बोध से संपन्न हो रही है। वह आरोपित वर्जनाओं को तोड़ना चाहती है। स्त्री विमर्श इस बात पर जोर देता है कि स्त्री को अपनी स्वतंत्रता के लिए धर्म और जाति के बंधनों को सबसे पहले तोड़ना होगा। स्त्री की नैतिकता का मापदंड उसकी यौन शुचिता से जुड़ा हुआ है। मैत्रेयी पुष्पा तर्क देती है कि यदि कोई स्त्री अपने भूखे बच्चे को बचाने के लिए देह का विक्रय करती है तो उसे अनैतिक करार देना अमानवीय है। स्त्री विमर्श को अक्सर दैहिक स्वच्छंदता से जोड़कर उसका मजाक उड़ाया जाता है। यौन शुचिता के नाम पर स्त्री के चरित्र को जिस प्रकार वर्जनाओं में कैद कर दिया गया है। स्त्री विमर्श उसके खिलाफ विद्रोह है। पुरुष विवाह पूर्व और विवाहेत्तर यौन संबंध बनाता है, समाज उसे निंदनीय नजरों से नहीं देखता। स्त्री का जरा सा भी विचलन कई बार उसकी जान भी ले लेता है। नैतिकता का यह दोहरा मानदंड अपने आप में स्वयं अनैतिक है। स्त्री विमर्श स्त्री को अपने बारे में सोचने, अपने सामर्थ्य को पहचानने की प्रेरणा देता है। वह स्त्री को उन राहों को खोलने के लिए प्रेरित करता है जो केवल पुरुषों के लिए आरक्षित थी। स्त्री विमर्श विवाह, संतानोत्पत्ती, सेक्स और पारिवारिक संबंधों के मामले में स्त्री को स्वयं अपने निर्णय लेने की समझ पैदा करना चाहता है। दहेज प्रथा, भ्रूण हत्या प्रथा बाल विवाह, सामाजिक भेदभाव और घरेलू उत्पीड़न के विरोध में प्रतिदिन कहीं ना कहीं आंदोलन हो रहा है। इन बुराइयों पर कानून भी बन रहे हैं। हम देखते हैं कि परिवार नामक संस्था स्त्री के शोषण तथा यौन उत्पीड़न की सबसे बड़ी कार्यशाला है। परिवार स्त्री को बाहरी संकटों से सुरक्षा तो प्रदान करता ही है तथा साथ ही साथ घर के दूसरे सदस्यों को स्त्री पर अत्याचार करने की छूट भी देता है। यह हिंसा लगातार चलती रहती है क्योंकि स्त्रियों की कमजोरी यह है कि वह उसकी शिकायत घर से बाहर करने में घबराती है। स्त्री पारंपरिक रूढ़ छवियों से मुक्ति तो चाहती है साथ ही साथ में अन्याय का प्रतिरोध भी करना चाहती है। स्त्री अस्मिता का प्रश्न स्त्री की मानवीय गरिमा के अधिकारों, समानता और न्याय का भी सवाल है। समकालीन कथा साहित्य में सामाजिक व्यवस्था के छद्‌म उत्पीड़न तथा परिवार और विवाह संस्था के भीतर स्त्री के दैहिक और मानसिक संत्रास, पीड़ा को खोलकर प्रकट किया गया है। रचनाकारों ने संयम और गंभीरता से स्त्री जीवन के सरोकारों को विभिन्न कोणों तथा आयामों से प्रस्तुत किया है। वर्तमान में भयावह होती स्त्री हिंसा और शोषण के परिदृश्य में स्त्री कथा लेखन की भूमिका, नए युग का विमर्श भी रच रही है। इसमें स्त्री जीवन के सभी आयामों को समग्रता से देखने की सृजनात्मक बेचैनी नजर आती है।

समकालीन हिंदी लेखकों ने नारी जीवन से जुड़े विविध प्रश्नों अपने उपन्यासों में गहराई से रेखांकित किया है।

मधु भाघुड़ी का उपन्यास 'अनादि अनंत' स्त्री जीवन की विडंबनाओं को उकेरने वाला उपन्यास है। गुड़िया के खेल से ज्यादा गणित के सवालों में रुचि रखने वाली कमली चौधरी खानदान की बहू बनकर, घरेलू समस्याओं में उलझ कर रह जाती है। उसका पति चौधरी स्त्रियों पर शोषण करना अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझता है। एक दिन जब कमली पति के आने के पहले सो जाती है तब चौधरी यह सहन नहीं कर पाता। लेखिका लिखती है – ''घने बालों को एक मुट्ठी में मरोड़ते हुए, दूसरी से दो–चार घूँसे लगा दिया। इससे पहले कि कमली रोती या चिल्लाती उसके शरीर पर कुछ टंगे हुए, कुछ चिपके हुए कपड़ों को पाशविक बल से चीर–फाड़कर अलग कर दिया। इसी आवेग से अपनी भूख मिटाते हुए कमली को तोड़–मरोड़ कर रख दिया।'' कमली को अपने पति द्वारा पीड़ित होना पड़ता है। अधिकांश स्त्रियां इसी तरह का मानसिक और शारीरिक शोषण सहन करती हैं।

'यह अंत नहीं' मिथिलेश्वर का सफल उपन्यास है। इस उपन्यास में सदियों से तिरस्कृत रहने वाले दलित नारियों की अवस्था में समय के साथ अपने आने वाले बदलावों को चित्रित किया गया है। भोजपुर जिले के खवासहीड़ गांव में एक तूफानी रात में दो जुड़वा बच्चों चुनिया और बंतू का जन्म होता है। चुनिया के जीवन में अनेक आंधी तूफान आते हैं लेकिन वह अंदर से अपने को इतना मजबूत बना लेती है कि बड़े से बड़े संकट के सामने भी नहीं घबराती।

क्षमा शर्मा का उपन्यास 'परछाई अन्नपूर्णा' कामकाजी महिलाओं के संकट, संघर्ष और सामाजिक स्थितियों के संदर्भ में एक बहस है। लेखिका ने नौकरी करने वाली स्त्रियों की रोजमर्रा की दिक्कतों का बेबाकी से चित्रण किया है। नौकरी करने वाली स्त्री घर और बाहर दोनों में संतुलन स्थापित करने की चिंता, कार्यालय में पुरुषों के रवैए को लेकर चिंता, बच्चों की चिंता, इसी में लगी रहती है। यही इस उपन्यास की कहानी भी है। उपन्यास की पात्र विभा घर और बाहर दोनों स्तरों पर युद्ध लड़ते हुए कई बार हताश और निराश होती है। औरतों के प्रति चरित्रहीन रवैया का जमकर विरोध करती है। नौकरी छोड़ देने के बारे में सोचती है। उसे कई बार लगता है कि उसे मर जाना चाहिए क्योंकि जीने की स्थितियां नहीं है। इन सब से जूझती संघर्ष करती, वह नौकरी करती, बच्चे को जन्म देती और स्थितियों से लड़ती भी है।

इस उपन्यास में लेखिका ने कुछ प्रश्न स्वतंत्रता और सुरक्षा के उठाए हैं और कुछ मुद्दे घरेलू श्रम और आर्थिक स्वावलंबन से जुड़े हैं।

पितृसत्तात्मक समाज स्त्रियों को एक बने बनाए ढांचे पर चलाना चाहता है। स्त्री अगर उनका विरोध करती है तो उसके सामने प्रश्न चिन्ह लगाए जाते हैं उसके चरित्र पर लांछन लगाया जाता है और उसे बदनाम किया जाता है। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास 'बेतवा बहती रही' की उर्वशी को बचपन से यही सिखाया जाता है कि लड़कियों को अपनी जवान काबू में रखनी चाहिए। उर्वशी का बड़ा भाई उसका दैहिक शोषण करता है लेकिन वह किसी को इसके बारे में बता नहीं पाती, न ही विरोध कर पाती है नासिरा शर्मा के उपन्यास 'ठीकरे की मंगनी' में उसका चाचा महरूख के पैर फेंक फेंक कर चलने पर गुस्सा करता है। 'छिन्नमस्ता' में प्रिया की मां उसे बचपन से यही सिखाती है कि लड़कियों को धीरे से हंसना चाहिए। पैरों की आवाज दबा कर चलना चाहिए। गीतांजलि श्री के उपन्यास 'माई' की सुनैना को भी उसकी मां, उसे पूरी लंबाई की फ्रॉक पहनने की सलाह देती है। चित्रा मुद्गल के 'आवाँ' उपन्यास में कुंती माँ अपनी बेटी से कहती है कि छुन्नू हमारे बुढ़ापे की लाठी है इसलिए छुन्नू अंग्रेजी स्कूल में पढेगा और तुम हिंदी स्कूल में पढ़ो। माँ का मानना है कि छुन्नू बुढ़ापे की लाठी है इसलिए उस पर विशेष ध्यान की आवश्यकता है। 'छिन्नमस्ता' की प्रिया को विदा के समय यही उपदेश मिलता है कि लड़की की डोली पीहर से उठती है और अर्थी ससुराल से।

समकालीन उपन्यासों की स्त्री किसी से भी शादी करने के लिए तैयार नहीं हो जाती। परिवार वाले अपनी बेटी की शादी की चिंता में रहते हैं और किसी न किसी प्रकार बोझ उतारना चाहते हैं। प्रभा खेतान के उपन्यास 'पीली आँधी' का पिता रहलीराम बेटी की शादी की चिंता में व्याकुल रहते हैं। इस व्यवस्था को बदलना चाहते हैं पर बदल नहीं पाते और व्यवस्था के अधीन बन जाते हैं। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास 'बेतवा बहती रही' में उर्वशी कि माँ अपने पति को हर वक्त समझाती है कि लड़की का पिता होने का मतलब लड़का ढूंढना और दहेज जुटाना ही है। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास 'स्मृति दंश' में चंदन की माँ यही कहती है कि योग्य वर के लिए लाखों खर्च करने पड़ते हैं। दहेज के बिना शादी संभव नहीं है। 'पीली आँधी' उपन्यास का रहलीराम शादी में बाइस लाख खर्च करता है लेकिन फिर भी लड़के वाले खुश नहीं होते। मृदुला गर्ग के 'कठगुलाब' में स्मिता का जीजा उसकी शादी करके जल्दी से जल्दी बोझ उतारना चाहता है इसके लिए चाहे कोई अयोग्य वर ही क्यों ना मिले। गीतांजलि श्री के उपन्यास 'माई' में पिता अपनी बेटी को साड़ी पहने नहीं देखना चाहता क्योंकि उसकी बेटी साड़ी पहनकर बड़ी लगती है और बेटी की शादी की चिंता उसे सताने लगती है। 'बेतवा बहती रही' में शशिरंजन की बहन की शादी दहेज की वजह से टूट जाती है। सब जानते हैं कि दहेज प्रथा कानूनी जुर्म है। आज इस तथ्य से भी कोई इनकार नहीं कर सकता कि दहेज के बिना शादी संभव नहीं है। जब तक समाज में लोगों की मानसिकता नहीं बदलेगी तब तक स्त्री का शोषण ऐसे ही चलता रहेगा।

समकालीन हिंदी उपन्यासों में कई ऐसे स्त्री पात्र हैं जो शादी में विश्वास नहीं रखते। 'कठगुलाब' की नीरजा विवाह नहीं करना चाहती क्योंकि वह मानती हैं शादी स्त्री शोषण का हथियार है, जहां आत्मसमर्पण के बदले शोषण ही मिलता है। आज समाज में बहुत सारी स्त्रियाँ विवाह और दांपत्य जीवन को कठोर बंधन मानते हुए आजीवन अविवाहित रहने का निर्णय ले रही है। 'सात नदियाँ एक समंदर' की तैय्यबा शादी को नारी जीवन के लिए सबसे बड़ा अभिशाप मानती है। 'छिन्नमस्ता' उपन्यास का नरेंद्र अपनी पत्नी पर पूरा नियंत्रण रखता है, उसको मानसिक, शारीरिक शोषण देना वह अपना हक समझता है।

समकालीन संदर्भ में तलाक की स्थिति बढ़ती जा रही है। आज स्त्री दांपत्य जीवन में बराबरी की मांग करती है। वह विवाह को मात्र अपमानजनक समझौता नहीं मानती बल्कि बराबरी चाहती है। वह गलत व्यवहार को चुपचाप सहन नहीं करना चाहती है। 'शाल्मली' उपन्यास की शाल्मली हो या 'शेष यात्रा' उपन्यास की अनु सभी के लिए तलाक वरदान साबित होता है। हालाँकि भारतीय समाज में आज भी तलाक का सारा दोष स्त्री के मत्थे ही डाला जाता है।

समकालीन उपन्यासकारों ने भी यही दिखाया है कि जो संबंध टूट गया उसको लेकर जीवन को जलाने की जरूरत नहीं है। इन उपन्यासकारों ने तलाक को एक सहज आवश्यकता के रूप में चित्रित किया है। आज की स्त्री गृहस्थी और मातृत्व में स्त्री जीवन की सार्थकता नहीं मानते, वह अपनी एक अलग दुनिया को खुद सृजित करना चाहती है।

आज शादी बाजार में भी नौकरी करने वाली स्त्रियों की मांग बढ़ रही है। स्त्रियों की नौकरी अच्छा वर मिलने का उपाय भी माना जाने लगा है। स्वतंत्रता की इस तलाश में स्त्री को शोषण का सामना भी करना पड़ता है। नौकरी पेशा स्त्री आर्थिक स्वतंत्रता हासिल करने के लिए घर और दफ्तर दोनों जगह अनेक दायित्वों को संभालती है। 'अकेला पलाश' उपन्यास की तहमीना घर और ऑफिस का दोहरा काम कर इतनी थक जाती है कि उसकी तबीयत बिगड़ जाती है। घर रसोई के कामों में कोई उसकी सहायता नहीं करता। घर और ऑफिस का दोहरा काम करके वह कुंठित और तनावग्रस्त हो जाती है उसे जीवन रसहीन लगने लगता है। नासिरा शर्मा की 'शाल्मली' का जीवन भी नीरस हो

उठता है वह इतनी व्यस्त रहती है कि अपनी बीमार मां से मिलने का अवसर भी नहीं जुटा पाती।

'यहीं कहीं घर था' उपन्यास सुधा अरोड़ा द्वारा रचित स्त्री जीवन की प्राथमिकताओं का प्रश्न उठाता है। यह उपन्यास एक ऐसे निम्न वर्गीय परिवार की कहानी है जहां स्त्री होने का अर्थ यही है कि युवा होते ही विवाह के बंधन में बांध दिया जाए। स्त्री बस विवाह करे, बच्चे पैदा करें और आज्ञाकारिणी की तरह पुरुषों की हां में हां मिलाती रहे। माता–पिता भी बस जल्दी से जल्दी उस बोझ से मुक्ति पाना चाहते हैं। इस उपन्यास की नायिका विशाखा बचपन से ही अच्छे–बुरे अनुभवों को झेलती नजर आती है। मकान मालिक की दुकान में अनाज के बोरे ढोने वाले नत्थू लोहार की कामुकता उसे भयाक्रांत कर देती है। वह चाहकर भी किसी को इस विषय में बता नहीं पाती। विशाखा और उसकी बड़ी बहन सुजाता को धर्म की आड़ में कई प्रकार की यातनाएं झेलनी पड़ती है। मोहल्ले वालों की बुरी नजर के अलावा धर्मगुरुओं के चेलों द्वारा गलीज वासना का शिकार बनने की नौबत आ जाती है।

सुधा अरोड़ा का एक अन्य उपन्यास है 'यह रास्ता उसी अस्पताल को जाता है', चित्रा की कहानी कहता है। चित्रा घर वालों की मर्जी के खिलाफ दिवाकर से प्रेम विवाह करती है। शादी के बाद मायके वालों से उसका नाता सदा के लिए टूट जाता है। दिवाकर शादी के पहले चित्रा के आगे पीछे घूमता था शादी के बाद चित्रा को हर बात में छोटे शहर का होने का होने का ताना देता है। इसी बीच मोनू का जन्म होता है और माता पिता के झगड़ों का उस पर बुरा असर पड़ता है और वह मानसिक बीमारी का शिकार बन जाता है। दिवाकर अपने पारिवारिक दायित्वों से मुंह मोड़ने लगता है, वह अन्य स्त्री से संबंध भी बना लेता है। चित्रा की सास को जब यह पता चलता है तो उनके मन में भी अपनी बहू के प्रति सहानुभूति और ममता का भाव उमड़ आता है।

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों के माध्यम से स्त्रियों के प्रति कुसंस्कारों से मुठभेड़ की है। लेखिका का नया उपन्यास 'गुनाह बेगुनाह' यही कहता है कि स्त्री की सुरक्षा का सवाल भी बड़ा सवाल है। स्त्री न घर में सुरक्षित है न थाने में। मैत्रेयी पुष्पा ने उपन्यास के पहले भाग का शीर्षक लिखा ''घर और गुफा हमें सुरक्षित रखते हैं''। इस उपन्यास की पात्र समीना ट्रैफिक पुलिस कर्मी बनकर चौराहे पर ट्रक वालों और बाइक, कार वालों के जुल्मों का शिकार बनकर बेइज्जत होती है वहीं इला चौधरी पुलिस की वर्दी पहनती तो है पर अपने पुरुष सहकर्मियों की आंख से देह के रूप में देखी जाती है। नायिका इला एक सजग महिला है वह एस.आई द्वारा महिला मुजरिम को 'रंडी' कहने पर ऐतराज करती है। इस उपन्यास में पुलिस में भर्ती स्त्रियों का सच और अपराधी गुनहगार स्त्रियों की कहानियों को बखूबी उभारा है। स्त्री की अपने अस्तित्व को बचाने की कोशिश और अपमान झेलने के बाद बगावत करती स्त्रियों की कहानी कहकर पुरुष वर्चस्व की घृणित मानसिकता को उभारा गया है। इस उपन्यास में समकालीन भारतीय समाज में व्याप्त ऑनर किलिंग, यौन हिंसा और घरेलू हिंसा की बढ़ती वारदातों पर भी गंभीर चिंतन है।

यह उपन्यास मैत्रेयी पुष्पा के निर्भिक लेखन और बेबाकबयानी का स्पष्ट उदाहरण है

सिम्मी हर्षिता का उपन्यास 'जलतरंग' स्त्री जीवन के अंतर्द्वंद, टूटन, घुटन, उदासी और छटपटाहट को पूरे आवेग व्यक्त करता है। एक स्त्री का संघर्ष मां के गर्भ से ही आरंभ हो जाता है। एक मां दूसरी स्त्री यानी बेटी को जन्म नहीं देनी चाहती क्योंकि उसे पता है जो उसने भोगा है वह उसकी बेटी भी भोगेगी।

उपन्यास की नायिका विवाह नहीं करना चाहती वह अशासकीय विद्यालय में नौकरी करती है वहॉ की दूसरी तेज–तर्रार शिक्षिकाएं उसे नीचे दिखाती हैं वह निराश हो उठती है लेकिन पलायन नहीं करती। अपने भीतर की आग को लेखन में व्यक्त करती है। उसका परिचय डॉ० मानी से होता है जो उसे लेखन का सुघड़ बनाने के तरीके बताता है। डॉक्टर मानी लेखिका से दैहिक संसर्ग करना चाहता है लेकिन लेखिका ऐसा नहीं चाहती। डॉ० मानी उसे 'अनमैरिड फस्टेड गर्ल' कहकर अपमानित करता है।

अल्पना मिश्र का पहला उपन्यास 'अन्हियारे तलछट में चमका' बिट्टो, ननकी बिट्टो की मां और मौसी जैसे स्त्री पात्रों के चरित्र की सूक्ष्म पड़ताल करता दिखाई पड़ता है। लेखिका ने दिखाया है कि चाहे स्त्री की आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर का अधिकार तो मिल गया है लेकिन आर्थिक स्वतंत्रता अब तक नहीं मिल पाई है। इन चारों पात्रों के माध्यम से लेखिका ने यही दिखाया है कि आज भी पुरुष प्रधान समाज में स्त्री उपेक्षित है। इस उपन्यास के पात्र सुमन बिना किसी अपराध के अपने पति मुन्ना की गाली गलौज और प्रताड़ना की को सहती है। भारत में ऐसी अनेक स्त्रियाँ हैं जो इस घरेलू हिंसा को चुपचाप सालों साल सहती रहती हैं। सुमन पति की इस प्रताड़ना को सहन नहीं करती वह इसका विरोध करती है।

पहले स्त्री अपमान और शोषण का अपना नसीब समझ कर चुपचाप सहन कर लेती थी पर अब वह इसका विरोध करने लगी है। पहले स्त्री आर्थिक स्वालंबन के लिए संघर्ष कर रही थी अब वह आर्थिक स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रही हैं। अपनी ही कमाई पर स्त्री का हक नहीं होता। अधिकांश कमाऊ बहुएँ हैं जो अपनी कमाई लाकर ससुराल वालों को दे देती हैं नहीं तो उन्हें तानों और मारपीट का सामना करना पड़ता है। अल्पना मिश्र ने दिखाया है कि बिट्टो की माँ गाँव की पहली ग्रेजुएट थी। वह प्राइमरी पाठशाला में नौकरी करती है वह जो कमाकर लाती है उसका पति उसके सारे पैसे ले लेता है।

'झूलानट' उपन्यास की रचना मैत्रेयी पुष्पा ने 'इदन्नमम्' और 'चाक' के उपरांत की है। झूलानट में तीन प्रमुख चरित्र हैं माँ, शीलो और बालकिशन। 'झूलानट' उपन्यास में यही दिखाया गया है कि एक पति द्वारा छोड़ी गई स्त्री को अपराधी के दृष्टि से देखा जाता है। उपन्यास की नायिका शीलों को भी उसका पति सुमेर इसलिए अपनाना नहीं चाहता क्योंकि वह पढ़ी–लिखी नहीं है, काली है, सुंदर नहीं है इसलिए सुमेर उसे अपने काबिल नहीं समझता और उसे गाँव में छोड़कर शहर में रहता है। शीलो को भी अम्मा पड़ोसी यहाँ तक कि उसके मायके वाले भी उसे नीची निगाह से देखते हैं।

झूलानट उपन्यास की शीलो प्रारंभ में तो एक अबला के रूप में दिखाई देती है किंतु धीरे–धीरे व उसके व्यक्तित्व में असाधारण परिवर्तन होता है। जब वह देखती है कि वह अपने पति को मनाने में हर प्रकार असफल हो रही है तब वह फैसला लेती है कि वह उसे पाने का प्रयास नहीं करेगी।

मैत्रेयी पुष्पा का उपन्यास 'कस्तूरी कुंडल बसै' स्त्री की स्वतंत्रता और जागरण की कहानी कहता है। कस्तूरी एक अभावग्रस्त ब्राह्मण परिवार में जन्मी है। उपन्यास के आरंभ में ही कहती हैं– ''मैं ब्याह नहीं करूंगी''। दूसरों के दबाव में आकर और भाई की गाली गलौज के कारण वह शादी के लिए तैयार हो जाती है। उसकी शादी हीरालाल से हो जाती है। पति की मौत के बाद घर का सारा बोझ उस पर आ जाता है। वह पति की मौत पर रेशम कुंवर की तरह सती होने की बजाय ढाई मील दूर इगलास की पाठशाला में पढ़ने जाती है। डेढ़ साल की बच्ची को बूढ़े और अपाहिज ससुर को सौंपकर वह निडर अपनी राह बनाती है।

उसकी अदम्य आकांक्षा उसे सभी मुसीबतों को झेलने के लिए तैयार करती है। स्त्री मुक्ति आंदोलन में भी आर्थिक स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता पर ही अधिक बल दिया जाता है कस्तूरी भी शिक्षा के महत्व को समझती है।

उपन्यास के माध्यम से लेखिका यही कहना चाहती है कि स्त्री की शक्ति उसके अपने ही भीतर छिपी है जैसे कस्तूरी मृग की नाभि में।

बस आवश्यकता इस बात की है कि स्त्री अपनी इस शक्ति को पहचाने अन्यथा उसे गुलामी और शोषण का जीवन जीने को बाध्य होना पड़ता है।

जानी–मानी साहित्यकार और स्वं गौरापंत शिवानी की सुपुत्री मृणाल पांडे को साहित्य विरासत में मिला है। मृणाल पांडे ने अपने उपन्यासों में चाहे वो 'विरुद्ध' हो, 'पटरंग पुराण', 'देवी', 'रास्तों पर भटकते हुए', 'हमको दिया परदेश' हो या 'अपनी गवाही' लगभग सभी उपन्यासों में मानव अधिकारों से वंचित नारी की समस्याओं को चित्रित किया है। इनकी नायिकाएँ और अन्य स्त्री पात्र भारतीय पितृसत्तात्मक समाज के द्वारा निर्मित आचार संहिताओं से बार–बार टकराते हैं।

'मैं जनकनंदिनी' आशा प्रभात का सीता पर लिखा गया ताजा उपन्यास है। आशा प्रभात स्वयं भी मिथिला क्षेत्र की है। अतः वह सीता के दर्द को बखूबी समझती है। इस उपन्यास में पहली बार सीता को एक स्त्री की तरह देखा गया है। लेखिका सवाल उठाती है कि सीता ने जो अग्नि परीक्षा दी, राम ने सीता का परित्याग किया, यह एक राजा का कर्तव्य हो सकता है लेकिन एक पति का नहीं। हिंदू धर्म में हम पूरे साल स्त्री की पूजा करते हैं लेकिन आज भी दहेज के नाम पर उसे जलाने में संकोच नहीं करते। सीता ने अग्नि परीक्षा दी लेकिन फिर भी उसे महल से निष्कासित होना पड़ा। लेखिका सवाल उठाती है कि यह कैसा रामराज्य है कि जहां एक गर्भवती स्त्री को राजमहल से निष्कासित कर दिया जाता है।

राम के ऐसा कहने पर सीता सवाल करती हैं कि अगर उन्हें सीता का त्याग ही करना था तो उन्हें खोजने की और लंका से मुक्त करने की क्या आवश्यकता थी।

लेखिका का मानना है कि चाहे हम कितनी कहानियां सुनाले पर यह प्रश्न ज्यों का त्यों बना रहेगा कि एक धोबी के ताने सुनकर राम विचलित क्यों हो गए। वह भी राजमहल को त्याग कर सीता के साथ क्यों नहीं चल पड़े। यह उपन्यास सीता के दुख, दर्द, उनके त्याग और शौर्य से हमारा परिचय कराता है। लेखिका एक नवीन दृष्टिकोण से सीता को हमारे सम्मुख रखती हैं।

इस उपन्यास में सीता मौन नहीं रहती। वह एक सशक्त स्त्री के रूप में चित्रित की गई है। इस उपन्यास में परम्परा और नवीनता का सामंजस्य है। यह उपन्यास सीता के रूप को समकालीनता से जोड़ने का प्रशंसनीय प्रयास करता दिखाई देता है। इस उपन्यास की सीता एक विद्रोहिणी स्त्री के रूप में चित्रित की गई है। वह मुखर होकर अपने अधिकारों के लिए आवाज उठाती है। उपन्यास के अंत में सीता लव–कुश को राम को सौंप देती है लेकिन जब राम सीता को वापस आने के लिए कहते हैं वह राम से स्पष्ट कह देती है कि आपने अपने पति धर्म का निर्वाह नहीं किया इसलिए मैं जनकनंदिनी आप का परित्याग करती हूँ। लेखिका ने इस उपन्यास में कौशल्या, तारा और मंदोदरी के सहारे विभिन्न राजघरानों की तत्कालीन स्त्रियों के दुख दर्द को भी लेखिका ने प्रकट किया है।

'योगिनी मंदिर' सत्यप्रकाश असीम का उपन्यास है। उपन्यास के कवर पेज पर लिखा है कि यह एक स्त्री की संघर्ष गाथा है लेकिन पढ़ने के बाद यह उपन्यास अलग–अलग मोर्चों पर लड़ती हुई पाँच स्त्रियों की संघर्ष गाथा लगती है। उपन्यास की मुख्य पात्र इमरती है लेकिन इमरती के अतिरिक्त यह उपन्यास लक्ष्मी, इनरी पिंकी और सलमा की कहानी भी प्रस्तुत करता है। लक्ष्मी और सलमा पुरानी परम्परा की स्त्री के रूप में चित्रित है। लक्ष्मी सामंती परिवार के सारे अत्याचार और अन्याय सहकर भी परिवार के लिए चिंतित रहती है। वह अपनी मर्यादा की सीमा नहीं लांघती। लक्ष्मी अपने पति के हत्यारे की मां सलमा के प्रति भी दुर्भावना नहीं रखती क्योंकि वह अपने पति की करतूतों को जानती थी। सलमा भी हालात की मारी अपने पतिहंता के घर में ही 15 साल गुजार देती है। जवान बेटे सलीम के जेल जाने के बाद भी वह लक्ष्मी की सेवा करती है। यह हमारे सामने एक परम्परागत आदर्श स्त्री को सामने रखती है। उपन्यास की प्रमुख पात्र इमारती अभावों में पलती है लेकिन वह अपने अस्मिता को बचाकर रखती है वह बीच की पीढ़ी की तरह व्यवहार करती है। स्त्री सशक्तिकरण के नाम पर ठाकुर उसका शोषण करता है। ठाकुर इमरती से संबंध बनाता है और उसका भरपूर इस्तेमाल करता है लेकिन इमरती भी उसका शोषण की पूरी कीमत वसूल करती है। अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से ठाकुर को दूध की मक्खी की तरह निकाल देती है और मुख्यमंत्री पद को प्राप्त करती है। आगे जाकर राजनीति में उसे घुटन होने लगती है और गुरु जी के आश्रम में चली जाती है। इनरी और पिंकी एक आधुनिक युग की स्त्री के रूप में नजर आती हैं। इनरी इमरती की तरह निरक्षर नहीं थोड़ी पढ़ी लिखी है। वह जानती है कि पुरुषों की इस भूखी दुनिया में कैसे खुद को निवाला बनने से रोकना है। वह जानती है कि पुरुषों को कैसे चलाना है। इनरी आने वाले कल का एक सशक्त चेहरा दिखती है। पिंकी एक रईस घराने की पढ़ी–लिखी लड़की है। वह एक व्यवहार कुशल आधुनिक मॉडर्न युवती है लेकिन कोई भी उसका गलत फायदा नहीं ले सकता है वह अत्यंत सजग और सतर्क रहकर अपना हर कदम उठाती है। सत्यप्रकाश असीम ने बड़ी संवेदनशीलता के साथ स्त्रियों की समस्याओं को इस उपन्यास में चित्रित किया है।

तस्लीमा नसरीन का लेखन समस्त स्त्री के दुख तकलीफों का लेखन है। उनके उपन्यास 'दो औरतों के पत्र' में कहानी पत्र व्यवहार के जरिए आगे बढ़ती है। यह दो बहनें है जमुना और नुपुर। वैसे इस उपन्यास में चार पांच स्त्री पात्र हैं जमुना और नुपुर के अलावा मां, मूमू और दीवा। कथा नायिका जमुना अपने ही पितृ ग्रह से निर्वासित है। उसके स्वतंत्र निर्णय के लिए उसके पितृ गृह में जगह नहीं है। वह दिल्ली के पहाड़गंज इलाके के छोटे से घर में रहती है। तस्लीमा नसरीन ने दिखाया है कि स्त्री कभी भी स्वेच्छा से अपने घर और परिवेश से अलग नहीं होना चाहती। जमुना के पति यह जानते हुए भी जमुना की उनकी मर्जी से कराई गई शादी क्यों टूटी, जमुना के अकेले रहने को ही ऐय्याशी मानते हैं और शक की निगाह से देखते हैं। इस उपन्यास में स्त्री जीवन के सभी पहलुओं पर चर्चा है जैसे लड़का–लड़की के पालन–पोषण में फर्क, स्त्री की शिक्षा को उसकी बर्बादी का कारण मानना, पति का स्त्री की देह से लेकर धन तक का स्वामित्व का सवाल, स्त्री देह की पवित्रता–अपवित्रता का सवाल, घर और खाना बनाना केवल स्त्री की जिम्मेदारी जैसी मानसिकता, कमाऊ स्त्री का गृहस्थी में खर्च का अनुपात, विवाह के साथ स्त्री की पहचान, उसका नाम धाम मिट जाने का सवाल आदि सभी शामिल है। तस्लीमा नसरीन अपने क्रांतिकारी लेखन के लिए जानी जाती है। विवाह को समझौता ही मानती है। चाहे वह परिवार की रजामंदी से हो या स्वयं चुनकर किया गया हो, विवाह स्त्री के लिए बंधन ही होता है। तस्लीमा नसरीन जमुना के माध्यम से यह सवाल उठाती है कि अगर पुरुष अपनी दैहिक जरूरतों को इधर–उधर से पूरा करता है तो कोई फर्क नहीं पड़ता लेकिन अगर स्त्री अपनी दैहिक जरूरतें पूरी करे तो अनैतिक क्यों माना जाता है?

तस्लीमा नसरीन का मानना है कि कुसंस्कारों और अंधविश्वासों से लड़ने के लिए भी मोर्चा खोलना होगा। नहीं तो कहीं डायन और कहीं देवी के नाम पर स्त्री का शोषण चलता रहेगा। इस उपन्यास में लेखिका ने नूपुर के चरित्र में लगातार विकास दिखाया है। वह दंतस से प्यार के मामले में भी भावुकता से बाहर निकल कर एक परिपक्व स्त्री के रूप में नजर आती है। तस्लीमा नसरीन यह दिखाती है कि स्त्री एक दोस्त, साथी चाहती है। वे अपनी देह से लेकर संपत्ति तक अधिकार जमाने वाले पति में भी एक साथी ही ढूंढती रह जाती है।

तस्लीमा नसरीन का दूसरा उपन्यास है 'निमंत्रण'। यह कहानी एक प्रेमी द्वारा बलात्कार करने और उस बलात्कृत लड़की की कहानी है। शीला से प्यार करती है वह अपने प्रेम की यूटोपियाई दुनिया बना लेती है। मंसूर उसके विश्वास और भरोसे को धोखा देता है और अपने दोस्त के

साथ उसका सामूहिक बलात्कार करता है। स्त्री के इस अपमान की घटनाएँ देश भर में घटती रहती हैं। बलात्कारियों के लिए अब भी कठोर नियम नहीं है। 19 बरस की शीला का मंसूर से प्यार करना, उसके साथ विवाह का सपना देखना गलत नहीं है लेकिन ऐसा लगता है कि लेखिका इस उपन्यास के माध्यम से किशोरियों को सतर्क रहने की सलाह दे रही है कि लड़कियां जब ऐसे धोखे का शिकार बनती हैं तब वह तन और मन दोनों से ही जर्जर हो जाती है उनकी रूमानियत भरी दुनिया पल भर में ही तहस–नहस हो जाती है।

मीनाक्षी स्वामी का उपन्यास 'भूभल' स्त्री की दैहिक स्वतंत्रता के ज्वलंत प्रश्नों को हमारे सामने रखता है। उपन्यास के प्रारंभ में ही अबोध सरला का बलात्कार दिखाया गया है और साथ ही यह भी दिखाया गया है कि कोई भी चौकसी, कोई प्रतिबंध, कोई कानून इन हवस के शिकारियों पर शिकंजा नहीं कस पाता। इस उपन्यास में हम तीन पुरुष पात्र देखते हैं– राज, मणि और उमेश। राज, इस उपन्यास की नायिका कंचन का भाई है, वह एक परंपरागत पात्र के रूप में नजर आता है और कंचन पर अंकुश बनाए रखना ही वह अपना परम कर्तव्य समझता है। मणि एक महत्वाकांक्षी युवक है, जो पहले कंचन का दोस्त होता है, बाद में उसका प्रेमी और पति बनता है। कंचन पर लगे चारित्रिक लांछन से वह कंचन से मुंह मोड़ कर गैर जिम्मेदारी दिखाते हुए एक पलायनवादी के रूप में नजर आता है। तीसरा पात्र उमेश नव धनाढ्य वर्ग से आता है। वह हवस का शिकारी है, रंगीन तबीयत का आदमी है। अपनी शिक्षिका को भी अपनी हवस का शिकार बनाना चाहता है। वह कभी इस लड़की का बलात्कार करता है, कभी उस लड़की का, पर हर बार साफ बरी हो जाता है। वह उपन्यास की नायिका को भी अपना शिकार बनाना चाहता है लेकिन कंचन एक तेजस्विता के रूप में सामने आती है। वह हर मोर्चे पर अपनी आवाज बुलंद करती है, अपने पर लगे कथित बलात्कार की धज्जियां उड़ाती है। वह एक निर्भीक और साहसी महिला के रूप में सामने आती है। भूभल का अर्थ है चिंगारियां से युक्त गर्म राख। निरंतर प्रज्वलित रखने के लिए इसमें कंडा (उपला) दबा दिया जाता है ताकि जब चाहे फिर लौ बनाया जा सके। लेखिका ने दिखाया है कि एक तरफ वह बलात्कार की पीड़ा झेलती है, समाज के तानों का सामना करती है वहीं दूसरी तरफ न्याय के काम पर भी छली जाती है। न्याय व्यवस्था की यातनापूर्ण लड़ाई में उसे विजय की संभावना टूटती ही अधिक नजर आती है। उपन्यास में लेखिका लिखती है –

"(1) क्या इस दुनिया में सारे पुरूष ऐसे ही सोचते हैं? जबरदस्ती से दूषित हुई देह क्या वास्तव में दूषित है? जोर जबरदस्ती के मामले में कोई स्त्री मन से तो समर्पित होती ही नहीं है। क्या दैहिक पवित्रता ही सब कुछ है? प्रश्न केवल कौमार्य का तो नहीं, आत्मविश्वास, भरोसे और जबरदस्ती का भी है। बलात्कार केवल शरीर का तो नहीं, मन, प्राण और आत्मा का भी तो हुआ है, आत्मविश्वास और आत्मसम्मान का भी तो हुआ है। (1)"

लेखिका ने अत्यंत संवेदनशीलता और संजीदगी से स्त्रियों के बलात्कार की पीड़ा को वाणी दी है। स्त्रियों के बलात्कार से संबंधित कानूनों में जो संशोधन अनिवार्य हो गए हैं उन सब पर यह अत्यंत शिद्दत से लिखा गया उपन्यास है। भारत में वैसे तो महिलाओं को देवी का दर्जा दिया गया है लेकिन वही देश में महिलाओं के साथ बलात्कार जैसी घटनाएँ हो रही हैं। दिल्ली का निर्भया गैंगरेप, हैदराबाद रेप केस सचमुच दिल दहला देने वाला है।

रामकिशोर मेहता का उपन्यास 'अपराजिता का आत्मकथ्य' एक सौ बाइस पृष्ठों में लिखित एक आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है। इस उपन्यास में लेखक ने यही दिखाया है कि इस पुरुष वर्चस्ववादी समाज में स्त्री शाश्वत पराजिता है। उस पर विजय पाने के लिए कोई बाहर से नहीं आता। वह तो अपनों से ही विजित है। पराधीन है। इस उपन्यास में कैकेयी स्पष्ट बता देती है कि तत्कालीन अयोध्या के समाज में स्त्री की स्थिति वैसी ही है जैसी आज है, उसे भी अपनी जगह तलाशने और बनाने के लिए उतना ही संघर्ष करना पड़ा जितना आज स्त्रियों को करना पड़ता है। रामकिशोर लिखते हैं कि कैकेयी अर्थात अपूर्व आत्मविश्वास से भरी स्वाभिमानी और युद्ध कौशल में दक्ष स्त्री थी, उसे राजा दशरथ के श्री चरणों में इसलिए चढ़ा दिया गया था ताकि उसके पिताजी के घोड़ों का व्यापार फलता फूलता रहे और केकय देश को एक ताकतवर संरक्षण प्राप्त हो सके। कैकयी के पिता ने उसे बलि चढ़ा दिया था। वह वृद्ध दशरथ से विवाह तो कर लेती है पर उसके मन में प्रतिशोध और घृणा के भाव भर उठते हैं। वह लगातार दशरथ के विरुद्ध षड्यंत्र रचने लगती है। कैकेयी कहती है –

(2)"एक स्त्री होने के नाते मेरे मन में भी कोमल भावनाएं थी। परंतु उससे भी कहीं अधिक एक स्त्री होने का भाव था। वह एक स्त्री पक्षधरता का भाव था। मैं अपने समाज में स्त्री की स्थिति को खुली आंखों से देखती थी। पुरुषों के रचे विधान से स्त्री को देखना मुझे स्वीकार नहीं था। (2)"

लेखक ने दिखाया है कि कैकेयी यानी अपूर्व में स्त्री चेतना बहुत प्रबल थी। वह पुत्र और पुत्री में कोई अंतर न मानते हुए पुत्रवती भवः की जगह संतानवती भवः कहती थी। कैकेयी इस उपन्यास में यही प्रश्न करती है कि मेरा कौन सा कुल है, वह कुल जिसने मुझे त्याग दिया या वह कुल जिसने मुझे कभी अपनाया ही नहीं।

इस उपन्यास में हम रामायण की कथा को कैकेयी के नजरिए से देखते हैं। सीता के विषय में कैकेयी कहती है कि सीता को उन अपराधों का दंड मिला जो उसने किए ही नहीं थे। शैशव में उसे उसके असली माता–पिता ने त्याग दिया और यौवन में उसके पति राम ने। रामकिशोर ने इस उपन्यास में दिखाया है कि राज महल में सत्ता और शक्ति के लिए ठीक वैसा ही संघर्ष चल रहा था जैसा हम आज की राजनीति में देखते हैं। यह उपन्यास आश्चर्यचकित करता है कि एक रामायण के भीतर कितने अनदेखे अनजाने महाभारत चल रहे थे। यद्यपि कैकेयी का राम और सीता से कोई द्वेष नहीं था पर उन पर निशाना साध कर वह दशरथ को आहत और पराजित करना चाहती थी। यह उपन्यास मात्र कैकयी की आत्मकथा न होकर अनेकानेक स्त्रियों की भी समवेत आत्मकथा नजर आती है।

'पायदान' सोना चौधरी का एक नया और पहला उपन्यास है। इस उपन्यास की नायिका अपनी शर्तों पर अपना जीवन जीना चाहती है। वह पारिवारिक विरोध और सामाजिक तिरस्कार से संघर्ष करते हुए आगे बढ़ तो जाती है लेकिन यह यौन शोषण का शिकार बनती है। ऐसा लगता है सोना चौधरी यही दिखाना चाहती है कि यदि कोई लड़की किसी भी क्षेत्र में भी सफलता पाना चाहती है तो उसकी कीमत तो उसे चुकानी ही पड़ेगी। इस उपन्यास में सोना चौधरी ने आंचल के माध्यम से एक ऐसी लड़की की कहानी कही है जो लड़कियों के लिए वर्जित क्षेत्र फुटबॉल के मैदान में प्रवेश करती है। ग्रामीण परिवेश में पली बढ़ी है, वह महत्वाकांक्षी है, लेकिन कम से कम समझौता करने के लिए तैयार होती है। वह अपने वजूद को बचा लेना चाहती है। वह मेहनत करती है। फुटबॉल का मैदान ही उसके लिए सब कुछ होता है लेकिन फिर भी वह अपने लक्ष्य तक पहुंच नहीं पाती क्योंकि वह कामयाबी के लिए अपनी देह से समझौता नहीं कर पाती। वह कई बार सोचती है कि 'काश मैं लड़का होती'। उसके भीतर विद्रोह की चिंगारी धधक उठती है।

'पायदान' मुक्ति के लिए छटपटाती एक औरत की कहानी है। वह देखती है कि चाहे खेलों की दुनिया हो या नौकरी, यह दुनिया बस पुरुषों की है। वह छूटती, टूटती चली जाती है।

युवा लेखिका जयंती का उपन्यास 'आस पास से गुजरते हुए' महाराष्ट्र के सारस्वत परिवार की लड़की अनु की कहानी है। अनु अपने बल पर स्वतंत्र ढंग से जिंदगी जीना चाहती है। वह कहती है –

"(3) मैं अकेली रहना चाहती हूं। मेरी अपनी जिंदगी है, मैं अपनी तरह से रह सकती हूं.... मेरी अपनी सीमाएं हैं, अपनी शंकाएं हैं। अब मुझे अपनी गलतियों का भार उठाकर खुद जीना सीखना होगा। (3)"

अनु ने अमरीश से सच्चा प्यार किया था लेकिन धोखा खाने के बाद वह पुरुष जाति से घृणा करने लगती है और अंत में शादी न करने का फैसला लेती है। अनु स्त्री की नियति को बदलने की कोशिश करती है पर सफल नहीं हो पाती।

अनु की जिंदगी में रेत ही बचती है वह भीतर की स्त्री को उसकी पूरी अस्मिता के साथ जीवित रखने की पूरी कोशिश करती है लेकिन पुरुष वर्चस्व के कारण कहीं भी पहुंच नहीं पाती।

'स्वप्न ही रास्ता है' चर्चित लेखिका लवलीन का पहला उपन्यास है। उपन्यास की नायिका 'अपरा' एक निम्न मध्यवर्गीय परिवार की अविवाहित लड़की है। अपरा की आंखों में सुनहरे भविष्य का सपना पल रहा है। वह अपनी अस्मिता को बरकरार रखते हुए अपनी जिंदगी जीने की चाहत रखती है। वह कहती है –

"(4) औरत का स्वतंत्र व्यक्तित्व, आर्थिक स्वावलंबन और मानसिकता स्वायत्तता पुरुष को आहत और क्षुब्ध करते हैं। हम प्रेम में पड़ते हैं, पर अकेलापन नहीं मिटता। उलटे बढ़ जाता है और एकांत दुर्लभ हो जाता है, जो कि रचनात्मकता का मूल आधार है। (4)"

अपरा किसी पुरुष से प्रेम नहीं करना चाहती क्योंकि वह मानती है कि प्रेम अकेलेपन के रास्ते में एक बड़ी बाधा है। अपरा के जीवन में सुशील और गया प्रसाद आते हैं लेकिन उसे लगता है कि वह उसकी महत्वाकांक्षा और मानसिकता को समझ नहीं पा रहे हैं। उपन्यास में हम देखते हैं कि अपरा औरत के स्वतंत्र अस्तित्व के लिए लगातार संघर्ष करते हुए भी कहीं नहीं पहुंच पाती। वह बिना शादी किए विजोन के साथ रहती है और संबंधहीनता में जीना उसकी नियति बन जाता है। अपरा में हम एक विरोधाभास पाते हैं कि एक तरफ वह पुरूष मित्रों की निकटता पसंद करती है वहीं दूसरी तरफ प्रेम के प्रति उसके मन में अनास्था है। अपरा यह समझ नहीं पाती है कि एक सफल और सुखी जिंदगी के लिए घर भी चाहिए होता है और प्रेम में स्थायित्व भी। इस तरह हम देखते हैं कि स्वप्न देखती अपरा कहीं भी पहुंच नहीं पाती। हिंदी साहित्य में पिछले वर्षों से विभिन्न परिवर्तन होते दृष्टिगोचर हुए हैं। अनेक विमर्श भी हमारे सामने आए हैं। हम ऐसा कह सकते हैं कि सबसे अधिक सार्वभौमिक रहा है स्त्री विमर्श। यह नारी मुक्ति के संदर्भ में पनपा विमर्श है। समकालीन हिंदी उपन्यासकारों ने भी नारी जीवन के विभिन्न पहलुओं को उजागर किया है। उपन्यासकारों ने अत्यंत संवेदनशीलता के साथ नारी जीवन के विविध आयामों को गहराई से चित्रित किया है।

संदर्भ सूची

1. मीनाक्षी स्वामी, भूभल, पृ० 70
2. राम किशोर मेहता, पराजिता का आत्मकथ्य, पृ० 84
3. सोना चौधरी, पायदान, पृ० 82
4. लवलीन, स्वप्न ही रास्ता है, पृ० 112